2025: CGHC: 47245

प्रकाशन हेतु अनुमोदित

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

द्वितीय अपील क्रमांक 258 वर्ष 2018

1 – हेमलाल, आत्मज खम्मन लाल सतनामी, व्यवसाय – श्रमिक, निवासी – ग्राम तुलसी (बरडेरा), थाना – मंदिर हसौद, तहसील – मंदिर हसौद, जिला – रायपुर, छत्तीसगढ़।

2 – श्रीमती शांति बाई, पति टंडनलाल सतनामी, व्यवसाय – गृहणी, निवासी – ग्राम गिरहोला, तहसील – अहिवारा, जिला – दुर्ग।

---- अपीलार्थीगण

विरुद्ध

1 – श्रीमती बिंदु बाई माहेश्वरी, पति टेकराम माहेश्वरी, आयु लगभग 40 वर्ष, निवासी – महावीर नगर, गुरुद्वारा के पास, न्यू पुरैना, रायपुर, तहसील एवं जिला – रायपुर, छत्तीसगढ़।

2 – कबीर सेवा आश्रम गुड़गुड़ा, द्वारा – अध्यक्ष एवं सर्वाकार, गुरु सर्वोत्तम दास, ग्राम – गुड़गुड़ा, तहसील – आरंग, जिला – रायपुर, छत्तीसगढ़। द्वारा – सतगुरु कबीर सेवा संस्थान, कपड़ा मार्केट के पास, पंडरीतराई, तहसील एवं जिला – रायपुर, छत्तीसगढ़।

3 – छत्तीसगढ़ राज्य, द्वारा – कलेक्टर, रायपुर, छत्तीसगढ़।

---- प्रत्यर्थीगण

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

अपीलार्थीगण की ओर से : श्री सुशोभित सिंह, अधिवक्ता

प्रत्यर्थी क्रमांक 2 की ओर से : श्री अनिरुद्ध श्रीवास्तव, अधिवक्ता

प्रत्यर्थी क्रमांक 3/राज्य की ओर से : श्री किशन साहू, उप शासकीय अधिवक्ता

माननीय न्यायमूर्ति श्री पार्थ प्रतीम साहू

बोर्ड पर आदेश

15/09/2025

1. सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के अंतर्गत यह द्वितीय अपील अपीलार्थीगण/प्रतिवादीगण द्वारा दिनांक 15.03.2018 को सिविल अपील क्रमांक 92–A/2017 में पारित आक्षेपित निर्णय एवं डिक्री की वैधानिकता और स्थिरता को चुनौती देते हुए प्रस्तुत की गई है, जिसके द्वारा विद्वान प्रथम अतिरिक्त जिला न्यायाधीश, रायपुर, जिला–रायपुर (छ.ग.) ने अपीलार्थीगण/प्रतिवादीगण द्वारा प्रस्तुत अपील को खारिज किया और व्यवहार वाद क्रमांक CFCS 3–A/2012 में पारित निर्णय एवं डिक्री दिनांक 25.09.2017 की पुष्टि की, जिसमें विद्वान सप्तम व्यवहार न्यायाधीश वर्ग–2, रायपुर ने वादी/प्रत्यर्थी क्रमांक 2 के वाद को स्वीकार किया था।

2. इस अपील के निराकरण हेतु प्रासंगिक तथ्य यह हैं कि वादी/प्रत्यर्थी क्रमांक 2 ने ग्राम गुड़गुड़ा, तहसील आरंग, जिला रायपुर में स्थित खसरा नंबर 13, क्षेत्रफल 0.78 हेक्टेयर भूमि के संबंध में स्वत्व की घोषणा और वादी के नाम पर भू–अभिलेखों को संशोधित करने के लिए एक व्यवहार वाद प्रस्तुत किया था। वादी ने प्रतिवादी क्रमांक 1 से 3 के विरुद्ध स्थायी व्यादेश की डिक्री की भी मांग की और दिनांक 25.10.2009 के वसीयतनामा को इस आधार पर शून्य एवं निष्प्रभावी घोषित करने की प्रार्थना की कि वाद भूमि को पूर्व अध्यक्ष एवं सरवराकार, गुरु स्वरूप दास साहेब द्वारा दिनांक 07.09.2007 के पंजीकृत विक्रय पत्र के माध्यम से खरीदा गया था। यह वादी के नाम पर दर्ज थी, यद्यपि स्वरूप दास द्वारा श्रीमती बिंदु माहेश्वरी, पत्नी टेक राम माहेश्वरी के पक्ष में दिनांक 25.10.2009 को एक वसीयतनामा निष्पादित किया जाना अभिकथित है। यह भी अभिवचन किया गया था कि स्वरूप दास अपनी गंभीर स्थिति और पक्षाघात (पैरालिसिस) के दौरे के कारण दिनांक 24.10.2009 से 28.10.2009 तक कंवर नर्सिंग होम, रायपुर में भर्ती थे और कोमा में थे। डॉक्टर की सहमति से उन्हें छुट्टी दी गई और उसके पश्चात 31.10.2009 को आश्रम में उनकी मृत्यु हो गई। कथित वसीयतनामा का निष्पादन उस अवधि के बीच का है जब स्वरूप दास अस्पताल में भर्ती थे। यह अभिवचन किया गया कि वसीयतनामा एक कूट–रचित एवं कूटरचित दस्तावेज है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

3. प्रतिवादी क्रमांक 1, जो वसीयत का हिताधिकारी है, तथा प्रतिवादी क्रमांक 2 और 3, जो स्वयं को स्वरूप दास का पुत्र और पुत्री होने के नाते उनका विधिक प्रतिनिधि होने का दावा करते हैं, ने वादी द्वारा प्रस्तुत वाद पत्र का संयुक्त जवाब प्रस्तुत किया। प्रतिवादी क्रमांक 1 ने वसीयत के निष्पादन का समर्थन किया, हालांकि, जवाब दावा में यह भी अभिवचन किया गया कि यदि यह न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि वसीयत सिद्ध नहीं हो सकी, तो प्रतिवादी क्रमांक 2 और 3, स्वरूप दास के विधिक प्रतिनिधि होने के नाते, वाद की विषय–वस्तु वाली संपत्ति के हकदार होंगे।

4. विद्वान विचारण न्यायालय ने अभिवचनों के आधार पर विचारार्थ कुल पांच वाद–प्रश्न निर्मित किए और अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्यों के आधार पर पूर्ण विचारण के पश्चात यह धारित किया कि दिनांक 25.10.2009 के वसीयतनामा का निष्पादन भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 की धारा 63 (c) और भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 68 के प्रावधानों के अनुसार सिद्ध नहीं है। यह भी दर्ज किया गया कि स्वरूप दास ने सर्वाकार के रूप में वर्ष 1991 में अपने पिता के नाम के स्थान पर गुरु का नाम उल्लेख करते हुए आश्रम की भूमि बेची थी और पुनः जब 07.09.2007 को आश्रम के पक्ष में भूमि खरीदने हेतु विक्रय पत्र निष्पादित किया गया था, तब फिर से उनका नाम स्वरूप दास के रूप में उल्लेखित किया गया था जिसमें गुरु का नाम सेवक दास दर्शाया गया था। न्यायालय ने यह संप्रेक्षित किया कि भूमि आश्रम के सर्वाकार की हैसियत से खरीदी गई थी और वादी के पक्ष में वाद डिक्री कर दिया। विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय एवं डिक्री को प्रतिवादीगण द्वारा चुनौती दी गई, जिन्होंने प्रतिवादी क्रमांक 2 एवं 3 को स्वरूप दास का विधिक प्रतिनिधि होने का दावा करते हुए, इस आधार पर प्रथम अपील प्रस्तुत की कि विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित यह निष्कर्ष कि वाद संपत्ति आश्रम के सर्वाकार की हैसियत से खरीदी गई थी, साक्ष्य विहीन और विधि के विपरीत है। प्रतिवादी क्रमांक 2 एवं 3 द्वारा वसीयत के निष्पादन को चुनौती न दिए जाने की स्थिति में वसीयत पर विचारण न्यायालय का निष्कर्ष सही नहीं है।

5. अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता यह तर्क देंगे कि निर्विवाद रूप से, भूमि स्वरूप दास के नाम पर खरीदी गई थी, यद्यपि (पिता के नाम के स्थान पर) उनके गुरु का नाम सेवक दास दर्शाया गया था, किंतु यह उपधारित नहीं किया जा सकता कि एक बार जब कोई व्यक्ति संन्यासी बन जाता है और आश्रम में शामिल हो जाता है, तो वह अपने स्वयं के नाम पर कोई संपत्ति नहीं खरीद सकता। अतः, विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित यह निष्कर्ष कि वाद संपत्ति स्वरूप दास के नाम पर आश्रम के लिए खरीदी गई थी, पोषणीय नहीं है। अपने तर्क के समर्थन में, उन्होंने माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा 'मठ सौना एवं अन्य बनाम केदारनाथ उर्फ उमाशंकर एवं अन्य', ए.आई.आर. 1981 एस.सी. 1878 में दिए गए निर्णय का अवलंब लिया है।

6. प्रत्यर्थी क्रमांक 2 के अधिवक्ता अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता के तर्कों का विरोध करेंगे और यह निवेदन करेंगे कि इसके सर्वाकार द्वारा आश्रम के नाम पर भूमि की खरीद के संबंध में दोनों न्यायालयों द्वारा तथ्य का समवर्ती निष्कर्ष दर्ज किया गया है। उन्होंने तर्क दिया कि स्वरूप दास की मृत्यु से बहुत पहले ही उन्होंने अपने परिवार को छोड़ दिया था और आश्रम में शामिल हो गए थे। वाद पत्र में यह अभिवचन किया गया था कि वर्ष 1991 में स्वरूप दास ने अपने नाम के आगे अपने गुरु का नाम उल्लेखित करते हुए आश्रम की संपत्ति बेची थी, जिसे विद्वान विचारण न्यायालय ने भी अपने निर्णय और डिक्री में देखा है, जिससे यह स्पष्ट है कि वर्ष 2007 में विवादित संपत्ति खरीदे जाने से बहुत पहले ही उन्होंने परिवार छोड़ दिया था। उनका यह भी तर्क है कि एक बार जब कोई व्यक्ति धार्मिक पंथ में प्रवेश करता है, तो वह अपने प्राकृतिक परिवार के सदस्यों के साथ अपना संबंध विच्छेद कर लेता है। जैसे ही वह आश्रम में शामिल होता है, वह वानप्रस्थ, तपस्वी, संन्यासी या यति अथवा वैरागी, इन तीन श्रेणियों में से किसी एक के अंतर्गत आ जाता है। उन्होंने यह भी तर्क दिया कि एक बार जब स्वरूप दास भक्त बन गए, तो सर्वाकार के रूप में आश्रम में रहते हुए खरीदी गई संपत्ति आश्रम की होगी। विशेष रूप से तब जब यह विशिष्ट अभिवचन है कि संपत्ति वर्ष 1991 में बेची गई संपत्ति की आय से खरीदी गई थी। अपने तर्क के समर्थन में, उन्होंने मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा 'षणमुघ देसिका ज्ञानसंबंध बनाम संपदा शुल्क नियंत्रक', [1985] 153 आई.टी.आर. 390 (मद्रास) के प्रकरण में दिए गए निर्णय और माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा 'श्री कृष्ण सिंह बनाम मथुरा अहीर एवं अन्य' [(1981) 3 एस.सी.सी. 689] में दिए गए निर्णय का अवलंब लिया है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

7. मैंने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना और अधीनस्थ न्यायालयों के अभिलेखों का अवलोकन किया।

8. अपील के ज्ञापन में, अपीलार्थीगण ने विधि के निम्नलिखित सारवान प्रश्न प्रस्तावित किए हैं:

> "1. क्या अधीनस्थ न्यायालयों ने प्रतिवादीगण पर सबूत का भार डालकर वादी के वाद को डिक्री करते समय भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 101 और धारा 102 के प्रावधानों के अनुसार कानून की स्पष्ट भूल की है?
>
> 2. क्या अधीनस्थ न्यायालयों ने सबूत का भार गलत तरीके से प्रतिवादीगण पर डाल दिया है, विशेषकर तब जब वादी स्वयं वाद भूमि पर अपना स्वत्व सिद्ध करने में विफल रहा है?
>
> 3. क्या अधीनस्थ न्यायालयों ने यह उपधारणा करके कानून की भूल की है कि

आश्रम का सर्वाकार आश्रम की संपत्ति के अलावा निजी व्यक्तिगत संपत्ति नहीं रख सकता?

4. क्या वादी द्वारा प्रस्तुत वाद को खारिज कर दिया जाना चाहिए था जब निर्विवाद रूप से वादी वाद भूमि के क्रेता के लिए धन के स्रोत के संबंध में साक्ष्य देकर वाद भूमि पर अपना स्वत्व सिद्ध करने में विफल रहा है? "

9. यह अपील कथित वसीयत दिनांक 25.10.2009 के हिताधिकारी (प्रतिवादी क्रमांक 1) द्वारा प्रस्तुत नहीं की गई है, बल्कि यह प्रतिवादी क्रमांक 2 और 3 द्वारा प्रस्तुत की गई है, जो स्वरूप दास साहेब के विधिक प्रतिनिधि होने के नाते अपने अधिकारों का दावा कर रहे थे।

10. विद्वान विचारण न्यायालय ने प्रतिवादीगण द्वारा किए गए उन अभिवचनों पर विचार करते हुए कि दिनांक 25.10.2009 के वसीयतनामा के माध्यम से वाद संपत्ति प्रतिवादी क्रमांक 1 को दी गई थी, यह निष्कर्ष दर्ज किया है कि भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 101 के अनुसार वसीयत के विधिमान्य निष्पादन को सिद्ध करने का भार उन प्रतिवादीगण पर था, जिन्होंने वसीयत के आधार पर विवादित संपत्ति पर अपने अधिकारों का अभिवचन और दावा किया था। उक्त भार का निर्वहन नहीं किया गया और दिनांक 25.10.2009 की वसीयत को भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 (संक्षेप में '1925 का अधिनियम') की धारा 63 (c) के अनुसार सिद्ध नहीं किया गया।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

11. अभिलेख के अवलोकन से यह दर्शित होता है कि विद्वान विचारण न्यायालय ने आदेश–पत्रिका में यह उल्लेख किया है कि प्रतिवादी के अधिवक्ता ने साक्ष्य प्रस्तुत करने के अपने अधिकार को समाप्त करने का कथन किया था। कानून और 1925 के अधिनियम की धारा 63 (c) के प्रावधानों के अनुसार, यह उस व्यक्ति का दायित्व है जो वसीयत का लाभ प्राप्त करना चाहता है कि वह 1925 के अधिनियम की धारा 63 (c) के निबंधनों के अनुसार अनुप्रमाणक साक्षियों में से किसी एक का परीक्षण कराकर इसके विधिमान्य निष्पादन को सिद्ध करे। चूंकि किसी भी साक्षी का परीक्षण नहीं कराया गया है, अतः विद्वान विचारण न्यायालय और साथ ही अपीलीय न्यायालय द्वारा दर्ज यह निष्कर्ष कि दिनांक 25.10.2009 की वसीयत सिद्ध नहीं की जा सकी, किसी भी हस्तक्षेप की अपेक्षा नहीं रखता है।

12. अन्यथा भी, यह द्वितीय अपील वसीयत के हिताधिकारी द्वारा प्रस्तुत नहीं की गई है, इसलिए भी यह न्यायालय उक्त मुद्दे पर विस्तार से विचार नहीं कर रहा है और केवल अपीलार्थीगण/ प्रतिवादी क्रमांक 2 और 3 द्वारा स्वरूप दास साहेब के विधिक प्रतिनिधि होने के नाते दावा किए गए अधिकारों पर विचार कर रहा है।

13. प्रतिवादी क्रमांक 1 से 3 द्वारा प्रस्तुत जवाब दावा के अवलोकन से यह दर्शित होता है कि प्रतिवादी क्रमांक 2 और 3 का अभिकथन यह है कि विवादित भूमि उनके स्वर्गीय पिता स्वरूप दास साहेब द्वारा अपने जीवनकाल में भुनेश्वर मरार के पुत्रों जगद, जगदेव, तीज़राम और बैसाखू से पंजीकृत विक्रय पत्र दिनांक 07.09.2007 के माध्यम से खरीदी गई थी और क्रेता स्वरूप दास साहेब का नाम भूमि के स्वामी और कब्जाधारी के रूप में दर्ज किया गया था। विवादित भूमि (विक्रय पत्र की विषय–वस्तु) स्वरूप दास की व्यक्तिगत संपत्ति है। जवाब दावा के अवलोकन से आगे यह भी दर्शित होता है कि जवाब दावा संयुक्त रूप से, एक दिनांक 25.10.2009 की

वसीयत के हिताधिकारी द्वारा और दूसरा विधिक प्रतिनिधियों द्वारा प्रस्तुत किया गया है। जब एक बार प्रतिवादी क्रमांक 2 और 3 ने प्रतिवादी क्रमांक 1 के इस दावे का समर्थन कर दिया है कि विवादित संपत्ति के संबंध में प्रतिवादी क्रमांक 1 के पक्ष में दिनांक 25.10.2009 को वसीयत निष्पादित की गई थी, तो उक्त अभिवचन के आधार पर वे भूमि पर आगे किसी अधिकार का दावा नहीं कर सकते। यदि प्रतिवादी क्रमांक 2 और 3 के दावे पर विचार किया भी जाए, तो अभिलेखों में प्रतिवादीगण ने ऐसा कोई साक्ष्य (दस्तावेजी या मौखिक) प्रस्तुत नहीं किया है कि वे स्वर्गीय स्वरूप दास साहेब के विधिक प्रतिनिधि हैं।

14. स्वर्गीय स्वरूप दास साहेब के मृत्यु प्रमाण पत्र (प्रदर्श पी–14) में पिता के नाम के स्थान पर गुरु का नाम सेवक साहेब उल्लेखित है। विक्रय पत्र (प्रदर्श पी–1) के अवलोकन से यह भी विदित होता है कि क्रेता स्वरूप दास साहेब हैं और पिता का नाम यद्यपि सेवक दास साहेब उल्लेखित है, किंतु अन्य दस्तावेजों से यह प्रतीत होता है कि यह उनके गुरु का नाम है न कि उनके पिता का। दिनांक 10.07.2014 के आदेश (प्रदर्श पी–3) के माध्यम से आश्रम को सार्वजनिक ट्रस्ट के रूप में पंजीकृत किया गया था। वह आदेश सार्वजनिक ट्रस्ट अधिनियम के तहत सक्षम प्राधिकारी का था। प्रदर्श पी–6 सर्वोत्तम दास गुरु स्वरूप दास साहेब का कथन है जो अनुविभागीय अधिकारी (राजस्व) के समक्ष दर्ज किया गया था। अपने प्रतिपरीक्षण में उन्होंने कहा कि वे पिता के स्थान पर गुरु का नाम उल्लेख करते हैं। उन्होंने यह भी उल्लेख किया कि स्वरूप दास साहेब का बचपन का पिछला नाम खम्मन दास था। टी.आर. माहेश्वरी का कथन भी विचारण न्यायालय के समक्ष प्रदर्श पी–8 के रूप में रखा गया है। वाद के शीर्षक के अवलोकन से पता चलता है कि प्रतिवादी क्रमांक 1 के पति का नाम टेकराम माहेश्वरी है। प्रतिपरीक्षण में उन्होंने भी स्वीकार किया कि प्रतिवादी क्रमांक 2 के पिता का नाम खम्मन था न कि स्वरूप दास। उन्होंने यह भी स्वीकार किया कि स्वरूप दास के गुरु का नाम सेवक दास साहेब था। संपत्ति खम्मन के नाम पर नहीं खरीदी गई है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

15. वादी ने अपने अभिवचनों को सिद्ध करने के लिए तीन साक्षियों का परीक्षण कराया है। वादी की ओर से परीक्षित साक्षियों ने स्पष्ट रूप से कहा है कि भूमि तत्कालीन सर्वाकार कबीर सेवा आश्रम, स्वरूप दास, गुरु सेवक दास द्वारा ट्रस्ट के लाभ के लिए खरीदी गई थी और इसे अध्यक्ष/सर्वाकार स्वरूप दास, गुरु सेवक दास के नाम पर भी दर्ज किया गया था। सर्वोत्तम दास (वा.सा.–1) ने अपने मुख्य परीक्षण के पैरा–7 में कहा है कि प्रतिवादी क्रमांक 1 (वसीयत की हिताधिकारी) सिमगा के तहसीलदार टेकराम माहेश्वरी की पत्नी हैं। इस साक्षी के प्रतिपरीक्षण में इस कथन का खंडन नहीं किया गया है कि प्रतिवादी क्रमांक 1 तहसीलदार की पत्नी हैं।

16. मद्रास उच्च न्यायालय ने 'षणमुघ देसिका ज्ञानसंबंध' (पूर्वोक्त) के प्रकरण में इस प्रकार अवधारित किया है:–

> "8. मेन्स हिंदू लॉ, ग्यारहवां संस्करण, पृष्ठ 675, कंडिका 561, एक तपस्वी की संपत्ति के उत्तराधिकार के विशेष नियमों को निर्धारित करता है। इसमें यह बताया गया है कि याज्ञवल्क्य के अनुसार, वे उत्तराधिकारी जो एक तपस्वी की संपत्ति प्राप्त करते हैं, वे अपने क्रम में गुरु, सदाचारी शिष्य और वह जो धर्म–भ्राता माना जाता है और उसी पंथ से संबंधित है, और यह कि मिताक्षरा के अनुसार, एक ही मठ से संबंधित

आध्यात्मिक भ्राता तपस्वी की वस्तुएं लेता है और एक सदाचारी शिष्य तपस्वी की संपत्ति लेता है और उपरोक्त के अभाव में, उसी पंथ या मठ से संबंधित कोई भी व्यक्ति संपत्ति लेता है, भले ही तपस्वी के पुत्र और अन्य प्राकृतिक उत्तराधिकारी मौजूद हों। पृष्ठ 721 पर, लेखक ने किसी व्यक्ति के धार्मिक पंथ में प्रवेश करने के विधिक प्रभाव को इस प्रकार निर्धारित किया है कि:

'जो व्यक्ति किसी धार्मिक पंथ में प्रवेश करता है, वह प्राकृतिक परिवार के सदस्यों के साथ अपना संबंध विच्छेद कर लेता है। तदनुसार उसे उत्तराधिकार से अपवर्जित कर दिया जाता है। न तो वह और न ही उसका प्राकृतिक संबंधी एक–दूसरे की संपत्तियों के उत्तराधिकारी हो सकते हैं। इस आधार पर जो व्यक्ति अपवर्जित किए गए हैं, वे तीन श्रेणियों के अंतर्गत आते हैं, अर्थात्, वानप्रस्थ, या सन्यासी; संन्यासी या यति या तपस्वी; और ब्रह्मचारी, या स्थायी धार्मिक छात्र। किसी व्यक्ति को इन श्रेणियों के अंतर्गत लाने के लिए, उसके द्वारा समस्त धर्मनिरपेक्ष संपत्ति का पूर्ण परित्याग और सांसारिक मामलों से पूर्ण एवं अंतिम वापसी दिखाना आवश्यक है। केवल यह तथ्य कि कोई व्यक्ति स्वयं को बैरागी या धार्मिक भिक्षु कहता है, या वास्तव में वह ऐसा है, स्वतः ही उसे संपत्ति के उत्तराधिकार से वंचित नहीं करता है। न ही कोई शूद्र इस अयोग्यता के अंतर्गत आता है, जब तक कि प्रथा द्वारा ऐसा न हो। यह विधिक मृत्यु उस व्यक्ति को, जो किसी पंथ में प्रवेश करता है, निजी संपत्ति अर्जित करने और रखने से नहीं रोकती है, जो निश्चित रूप से उसके प्राकृतिक संबंधों पर नहीं, बल्कि उत्तराधिकार के विशेष नियमों के अनुसार हस्तांतरित होगी। लेकिन यदि कानून की दृष्टि में विधिक मृत्यु नहीं है, बल्कि केवल एक व्यक्ति द्वारा कुछ धार्मिक विचारों या पेशों को धारण करना है, तो स्थिति भिन्न होगी।'

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

9. मुल्ला के हिंदू लॉ, 15 वें संस्करण, पृष्ठ 183 पर, एक व्यक्ति की स्थिति जो अपने प्राकृतिक परिवार के संदर्भ में एक धार्मिक पंथ में प्रवेश करता है, इस प्रकार निर्धारित की गई है:

'जहाँ कोई व्यक्ति समस्त सांसारिक मामलों का परित्याग करते हुए एक धार्मिक पंथ में प्रवेश करता है, उसका यह कार्य विधिक मृत्यु के समतुल्य है, और यह उसे उत्तराधिकार से और विभाजन पर हिस्से से पूरी तरह अपवर्जित कर देता है।

वह समस्त संपत्ति जो परित्याग के समय ऐसे व्यक्ति की होती है, उसके परित्याग पर तुरंत उसके उत्तराधिकारियों को हस्तांतरित हो जाती है, लेकिन परित्याग के बाद उसके द्वारा अर्जित संपत्ति उसके आध्यात्मिक उत्तराधिकारियों को हस्तांतरित होती है। कोई व्यक्ति केवल स्वयं को संन्यासी घोषित करने या संन्यासी द्वारा सामान्यतः पहने जाने वाले कपड़े पहनने से संन्यासी नहीं बन जाता है। उसे संन्यासियों की

श्रेणी में प्रवेश करने के लिए आवश्यक संस्कार करने चाहिए; ऐसे संस्कारों के बिना, वह दुनिया के लिए मृत नहीं हो सकता।

शूद्र: रूढ़िवादी स्मृति लेखकों के अनुसार, एक शूद्र वैध रूप से धार्मिक पंथ में प्रवेश नहीं कर सकता है। यद्यपि कठोर दृष्टिकोण शूद्रों के तपस्वी जीवन को स्वीकृति या सहन नहीं करता है, लेकिन इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता है कि पूरे भारत में मौजूदा प्रथा ऐसे रूढ़िवादी दृष्टिकोण के बिल्कुल विपरीत है और ऐसी किसी भी प्रथा को प्रभावी बनाया जाएगा।'

10.'गियाना संबंध पंडारा संनधि बनाम कंदासामी तंबिरम', आई.एल.आर. [1887] मद्रास 375 में, इस न्यायालय की एक खंडपीठ ने मिताक्षरा कानून में सन्निहित आध्यात्मिक परिवार की धारणा और एक तपस्वी की व्यक्तिगत संपत्ति पर लागू उत्तराधिकार के विशेष नियम का उल्लेख किया है। तमिलनाडु में मठों के इतिहास का वर्णन करते हुए, विद्वान न्यायाधीशों ने निम्नानुसार अवधारित किया है (पृष्ठ 385):

'यदि कोई तपस्वी या सन्यासी ब्राह्मण है, तो उसे यति या संन्यासी कहा जाता है; यदि शूद्र है, तो उसे परदेसी कहा जाता है, और यदि शूद्र किसी अधीनम से जुड़ा है, तो उसे तंबिरन कहा जाता है, और यदि वह अधीनम का प्रमुख है, तो उसे पंडारा संनधि कहा जाता है।'

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

16.यह निस्संदेह सत्य है कि संन्यासी बनना किसी के सांसारिक जीवन और संपत्तियों का परित्याग है, और न तो प्राचीन ग्रंथ और न ही न्यायिक मिसालें बाध्यताओं की अवधारणा का संदर्भ देती हैं। हालांकि, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि संन्यासी बनने पर व्यक्ति की विधिक मृत्यु हो जाती है, यह माना जाना चाहिए कि संन्यास धारण करने के बाद, उसका पुनर्जन्म माना जाना चाहिए और इस प्रकार उसके पिछले सभी अधिकारों और बाध्यताओं को समाप्त माना जाना चाहिए। प्रकरण के इस दृष्टिकोण में, हम अधिकरण द्वारा अपनाए गए इस विचार से सहमत होने के इच्छुक हैं कि व्यवस्था पत्र धन या धन के मूल्य के प्रतिफल द्वारा समर्थित नहीं था और इसलिए, इसे दान के रूप में लिया जाना चाहिए।"

17. विद्वान विचारण न्यायालय ने साक्ष्य के परिशीलन पर यह निष्कर्ष दर्ज किया है कि वादी ने संभावनाओं की प्रबलता के आधार पर यह सिद्ध कर दिया है कि विवादित भूमि का स्वत्व आश्रम का है, और आगे यह भी कि वादी द्वारा वाद भूमि पर आधिपत्य होने के संबंध में अभिवचन करने के बाद भी, प्रतिवादीगण ने इस संबंध में कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया है और विवादित भूमि पर वादी का कब्जा पाया गया। विद्वान प्रथम अपीलीय न्यायालय ने भी अभिलेख पर मौजूद दस्तावेजी और मौखिक साक्ष्यों के परिशीलन पर विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा दर्ज निष्कर्षों की पुष्टि की है और अपील को खारिज कर दिया है। इस प्रकार, दो न्यायालयों के समवर्ती निष्कर्ष विद्यमान हैं।

18. उच्चतम न्यायालय ने अपने विभिन्न निर्णयों में यह स्पष्ट किया है कि द्वितीय अपील सुनवाई के लिए तभी स्वीकार की जा सकती है जब उसमें विधि का सारवान प्रश्न निहित हो। 'सी. डोड्डानारायण रेड्डी (मृत) विधिक प्रतिनिधियों के माध्यम से एवं अन्य बनाम सी. जयरामा रेड्डी (मृत) विधिक प्रतिनिधियों के माध्यम से एवं अन्य (2020) 4 एस सी सी 659' के प्रकरण में माननीय उच्चतम न्यायालय ने निम्नानुसार निष्कर्ष दिया है:

> "25. विधि का सारवान प्रश्न उत्पन्न होता है या नहीं, यह प्रश्न इस न्यायालय द्वारा निर्वचन का विषय रहा है। 'कर्नाटक बोर्ड ऑफ वक्फ बनाम अंजुमन–ए–इस्माइल मदरिस–उन–निस्वान' के निर्णय में यह धारित किया गया था कि द्वितीय अपील में तथ्य के निष्कर्षों में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता था। इस न्यायालय ने निम्नानुसार धारित किया: (एस सी सी पृष्ठ 347–48, कंडिका 12–15)
>
> '12. इस न्यायालय ने बार–बार यह धारित किया है कि सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के तहत द्वितीय अपील में हस्तक्षेप करने की उच्च न्यायालय की शक्ति केवल विधि के सारवान प्रश्न का विनिश्चय करने तक सीमित है, यदि प्रकरण में ऐसा कोई प्रश्न उत्पन्न होता है। न्यायालय ने उच्च न्यायालयों की उस पद्धति की निंदा की है जिसके तहत अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा पहुँचे गए शुद्ध तथ्य के निष्कर्षों में नियमित रूप से हस्तक्षेप किया जाता है, बिना इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि तथ्य का उक्त निष्कर्ष या तो विधि के विपरीत है या अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री पर आधारित नहीं है।
>
> 13.'रामानुज नायडू बनाम कन्हैया नायडू (1996) 3 एस सी सी 392' में, इस न्यायालय ने धारित किया: (एस सी सी 393)
>
> "अब यह सुस्थापित है कि विचारण न्यायालय और प्रथम अपीलीय न्यायालय के तथ्य के समवर्ती निष्कर्षों में उच्च न्यायालय द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 के तहत अपनी अधिकारिता के प्रयोग में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है। उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने धारा 100 के तहत द्वितीय अपील का जिस तरह से निर्णय किया, उसमें उन्होंने अपनी अधिकारिता को पूर्णतः गलत समझा।"
>
> 14.'नवनीतममल बनाम अर्जुन चेट्टी (1996) 6 एस सी सी 166' में, इस न्यायालय ने धारित किया: (एस सी सी पृष्ठ 166)
>
> "उच्च न्यायालय द्वारा धारा 100 सी.पी.सी. के तहत अधीनस्थ न्यायालयों के समवर्ती निष्कर्षों में हस्तक्षेप से तब तक बचा जाना चाहिए जब तक कि अनिवार्य कारणों से ऐसा करना आवश्यक न हो। किसी भी स्थिति में, उच्च न्यायालय से केवल अधीनस्थ न्यायालयों के निष्कर्षों को बदलने के लिए साक्ष्य के पुनर्मूल्यांकन की अपेक्षा नहीं की जाती है। ... यदि यह मान भी लिया जाए कि उसी साक्ष्य के पुनर्मूल्यांकन पर दूसरा दृष्टिकोण संभव है, तो भी उच्च न्यायालय द्वारा ऐसा नहीं किया जाना चाहिए था क्योंकि यह नहीं कहा जा सकता कि प्रथम अपीलीय

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

न्यायालय द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण किसी सामग्री पर आधारित नहीं था।"

15.और पुनः 'तालीपराम्बा एजुकेशन सोसाइटी बनाम मूथेदाथ सी मल्लिसेरी इल्लथ एम.एन. (1997) 4 एस सी सी 484' में, इस न्यायालय ने धारित किया: (एस सी सी पृष्ठ 486, कंडिका 5)

"5. ... उच्च न्यायालय धारा 100 सी.पी.सी. के तहत साक्ष्य के परिशीलन में अतिक्रमण करने और तथ्य के विपरीत निष्कर्ष दर्ज करने में घोर त्रुटि पर था, जो कि अनुमेय नहीं है।"

29. विद्वान उच्च न्यायालय ने उपरोक्त निर्णयों में निर्धारित कसौटियों को संतुष्ट नहीं किया है। दोनों न्यायालयों, विचारण न्यायालय और विद्वान प्रथम अपीलीय न्यायालय ने शाला त्याग प्रमाण पत्र की जांच की है और यह निष्कर्ष दिया है कि ऐसे प्रमाण पत्र से जन्म तिथि सिद्ध नहीं होती है। संभव है कि उच्च न्यायालय विचारण न्यायालय के रूप में कार्य करते हुए एक अलग दृष्टिकोण अपना सकता था, लेकिन एक बार जब दो न्यायालयों ने ऐसा निष्कर्ष दिया है जो महत्वपूर्ण दस्तावेजों के किसी गलत पाठन पर आधारित नहीं है, न ही कानून के किसी प्रावधान के विरुद्ध दर्ज किया गया है, और न ही यह कहा जा सकता है कि न्यायिक और तर्कसंगत रूप से कार्य करने वाला कोई भी न्यायाधीश ऐसे निष्कर्ष पर नहीं पहुँच सकता था, तो यह नहीं कहा जा सकता कि उच्च न्यायालय ने त्रुटि की है। परिणामस्वरूप, उच्च न्यायालय के समक्ष विचारार्थ विधि का कोई सारवान प्रश्न उत्पन्न नहीं हुआ।"

30. "अतः, हम यह पाते हैं कि उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय द्वारा दर्ज और प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा पुष्ट किए गए तथ्य के निष्कर्ष में हस्तक्षेप करके विधि की त्रुटि की है। तथ्य के निष्कर्षों में द्वितीय अपील में तब तक हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता, जब तक कि निष्कर्ष विधि के विपरीत न हों। उच्च न्यायालय तथ्य के निष्कर्षों में हस्तक्षेप नहीं कर सकता था।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

19. 'राजस्थान राज्य एवं अन्य बनाम शिव दयाल एवं अन्य (2019) 8 एस सी सी 637' के प्रकरण में माननीय उच्चतम न्यायालय ने निम्नानुसार निष्कर्ष दिया है:

'16. जब द्वितीय अपील में तथ्य के किसी समवर्ती निष्कर्ष को चुनौती दी जाती है, तो अपीलार्थी यह बताने का हकदार होता है कि यह कानून की दृष्टि में दोषपूर्ण है क्योंकि यह अभिवचनों से परे दर्ज किया गया था या यह किसी साक्ष्य पर आधारित नहीं था या यह महत्वपूर्ण दस्तावेजी साक्ष्य के गलत पाठन पर आधारित था या यह कानून के किसी प्रावधान के विरुद्ध दर्ज किया गया था और अंत में, यह निर्णय ऐसा है जिस पर न्यायिक रूप से कार्य करने वाला कोई भी न्यायाधीश तर्कसंगत रूप से नहीं पहुँच सकता था। ('राजेश्वर विश्वनाथ मामिडवार बनाम दशरथ नारायण चिलवेलकर [1942 एस सी सी ऑनलाइन एमपी 26: एआईआर 1943 नाग 117] में विद्वान न्यायाधीश विवियन बोस (जो

उस समय नागपुर उच्च न्यायालय के न्यायाधीश थे) का अभिनिर्धारण देखें।)

17.हमारी राय में, यदि उपरोक्त में से कोई एक या अधिक आधार, जैसा कि उल्लेख किया गया है, अभिवचन और साक्ष्य के आधार पर किसी उपयुक्त प्रकरण में बनता है, तो ऐसा आधार संहिता की धारा 100 के अर्थ के अंतर्गत विधि का सारवान प्रश्न गठित करेगा।'

20. उपरोक्त चर्चा के आधार पर और माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णयों के आलोक में, मैं विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित और विद्वान प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा पुष्ट किए गए निर्णय में कोई त्रुटि या अवैधता नहीं पाता हूँ। अतः, नीचे के दोनों न्यायालयों द्वारा दर्ज समवर्ती निष्कर्षों पर विचार करने के बाद, मुझे वर्तमान प्रकरण में इसे स्वीकार करने के लिए विधि का कोई सारवान प्रश्न निहित नहीं दिखता है, इसलिए यह अपील प्रारंभिक स्तर पर ही खारिज की जाती है।

21. डिक्री तदनुसार तैयार की जाए।

22. पक्षकार अपना–अपना वाद व्यय स्वयं वहन करेंगे।

सही /–

(पार्थ प्रतीम साहू)
न्यायाधीश

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरणः हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयीन एवं व्यवहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेजी स्वरुप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।